सामाजिक गतिशीलता लोकतंत्र और आतंकवाद

डॉ. नीता बाजपयी * **Doi : Https://Doi.Org/10.61703/Re6**

संक्षेप

लोकतंत्र शासन की वह पद्धति है जिसमें व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से एवं समूह के रूप से सक्रिय होता है तथा उनकी पारस्परिक अंत:क्रिया से जो मत वैभिन्न प्रकट होता है वही प्रतिनिधिवादी लोकतंत्र की गत्यात्मकता होती है। लेकिन इसके कारण कई बार यह भी होता है कि लोकतंत्र केवल एक प्रक्रियात्मक लोकतंत्र या निर्वाचन लोकतंत्र बनकर रह जाता है जिसके कारण व्यवस्था और जनमानस में दूरी बढ़ती है और समाज में व्यवस्था से पराएपन की संकल्पना का विस्तार होता है जो उसे हिंसा की ओर ली जा सकता है इसके अलावा परस्पर विरोधी समूह विरोध की सीमा को पार कर जाते हैं और उसमें से कुछ समूह शांतिपूर्ण उपायों को छोड़कर हिंसक उपायों की ओर चले जाते हैं इसके अतिरिक्त लोकतांत्रिक समाज की व्यवस्था भंग करने के लिए सीमापार देश विरोधी ताकतें भी सक्रीय रहती हैं जो आसंतुष्ट समूहो को हथियारबंद आंदोलन के लिए प्रेरित करती हैं। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य लोकतंत्र और आतंकवाद के बीच अन्त:क्रिया और पूरक परिस्थितियों का मूल्यांकन है।

निर्वाचनिय बहुलतंत्र - ELECTIVE POLICHRACY

शास्त्रीय रूप में लोकतंत्र लोगों की अभिव्यक्ति को वास्तविक रुप प्रदान करता है। *लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए दो दशकों से भी अधिक समय से कई मानक सहायता कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिनमें सरकारी एजेंसियों में सुधार के लिए तकनीकी सहायता, वकीलों, पत्रकारों, राजनीतिक दलों के नेताओं और ट्रेड यूनियनिस्टों के लिए प्रशिक्षण, नागरिक समाज संगठनों के लिए प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता और छात्रों के लिए आदान-प्रदान और छात्रवृत्ति शामिल हैं। आज, अमेरिकी सरकार, विशेष रूप से यू.एस. एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट (USAID) और USAID, नेशनल एंडोमेंट ऑफ डेमोक्रेसी या एशिया और यूरेशिया फाउंडेशन द्वारा वित्तपोषित दस गैर-सरकारी संगठनों (NGO) की एक सेना दुनिया भर के दर्जनों देशों में लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए ऐसे गैर-सैन्य तरीकों का उपयोग करना जारी रखती है। (एडेसनिक एवं मेकफाल, 2006)*

किंतु समसामयिक विश्व जन पुंज समाजों का विश्व है। इसमें इस शास्त्रीय उक्ति के लिये अधिक स्थान नहीं है कि लोकतंत्र जनता का जनता के लिये जनता द्वारा शासन है। अभिजन वादियों और नव उदार वादियों ने लोकतंत्र का अधिक व्यवहारिक रुप प्रस्तुत किया है। आज का प्रजातंत्र राजनैतिक निर्णय निर्माण शक्ति को जनता के मतों द्वारा प्रतियोगिता पूर्ण तरीके से प्राप्त करने का संस्थागत प्रयास है। वस्तुतः राजनीति सत्ता के लिये संघर्ष है और लोकतंत्र की यह विशेषता है कि वह सत्तात्मक प्रतियोगिता हेतु खुला मंच प्रदान करता है एवं निर्वाचनिय बहुलतंत्र - ELECTIVE POLICHRACY बन जाता है जिसमें व्यक्तिगत और सामूहिक हित संघर्ष में प्रभावशीलता प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। सार्वजनिक कल्याण जैसे नारे वास्तव में मतों को आकर्षित करने के तरीके मात्र है जिनका हित संघर्ष से कोई लेना देना नहीं है। इसलिए ञअमेरिका जैसे समृद्ध लोकतंत्र मे बहुलतंत्र लोकतंत्र और और चुनावी तंत्र के संदराभ मे यह प्रश्न उठता है कि - *क्या संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए लोकतंत्र और बहुलवाद को बढ़ावा देना संभव है? क्या ऐसे संभावित कार्य, कार्यक्रम और नीतियाँ हैं जिन्हें अपनाया जा सकता है - या टाला जा सकता है - जो जाँच और संतुलन की एक उपयुक्त प्रणाली के विकास को प्रोत्साहित करेंगे, विदेशी देशों के राजनीतिक जीवन में मौजूदा और उभरते समूहों की भागीदारी को बढ़ावा देंगे, ऐसे देशों में कानून के शासन को मजबूत करेंगे, और अल्पसंख्यक अधिकारों और मूल्यों की सुरक्षा को बढ़ाएँगे? यदि ऐसी पहल मौजूद हैं, तो उनकी सफलता की संभावना क्या है? कौन से कारक उनकी प्रभावशीलता को*

*सहायक प्रध्यापक, समाजशास्त्र, राज्य सम्पर्क अधिकारी एन.एस.एस, छत्तीसगढ़ शासन

प्रोत्साहित या मंद करेंगे? ये प्रश्न, जो पहले केवल दूरस्थ शैक्षणिक हलकों में ही संबोधित किए जाते थे, हाल ही में अमेरिकी विदेश नीति की बहस में सबसे आगे आ गए हैं। 1989 की लोकतांत्रिक क्रांतियों ने, लैटिन अमेरिका और एशिया और अफ्रीका के कुछ हिस्सों में सत्तावादी शासनों की वापसी के साथ, पूरे अमेरिकी सरकार और समाज में लोकतंत्र को बढ़ावा देने में रुचि का पुनरुत्थान किया है। (एलिसन और बेशाल , 1992) इसका उत्तर भी दिया जाता है कि "*अमेरिका के मिशन का तर्क है कि आज लोकतंत्र की वैश्विक ताकत और प्रतिष्ठा काफी हद तक अंतरराष्ट्रीय मामलों पर अमेरिका के प्रभाव के कारण है। टोनी स्मिथ ने असाधारण इतिहास का दस्तावेजीकरण किया है कि कैसे अमेरिकी विदेश नीति का उपयोग दुनिया भर में लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए किया गया है, एक ऐसा प्रयास जिसने जापान और जर्मनी के कब्जे में अपनी सबसे बड़ी सफलता का आनंद लिया, लेकिन लैटिन अमेरिका, वियतनाम और अन्य जगहों पर भारी असफलताओं का सामना करना पड़ा। नए अध्यायों और एक नए परिचय और उपसंहार के साथ, यह विस्तारित संस्करण हाल ही में राष्ट्रपति क्लिंटन, बुश और ओबामा के तहत लोकतंत्र को फैलाने के अमेरिकी प्रयासों का भी पता लगाता है और अरब स्प्रिंग में अमेरिका की भूमिका का आकलन करता है" (टोनी, 1994)*

सामाजिक गतिशीलता पहचान का संकट और समाज व राजनीति का अभिजनवादी रूप

सामाजिक गतिशीलता मानव जगत की सबसे मौलिक विशेषता है इसके लिए *एकसमान अंतर्निहित शक्तियाँ, पूरे पशु जगत में, जिसमें निश्चित रूप से मानव प्रजाति भी शामिल है, घटनाओं में सबसे मौलिक विरोधाभास एक ओर भावना और दूसरी ओर कार्य के बीच है। भावना पशु जगत की एक विशिष्ट विशेषता है। लिनियस के प्रसिद्ध वाक्यांश में: "खनिज बढ़ते हैं; पौधे बढ़ते हैं और जीवित रहते हैं; जानवर बढ़ते हैं, जीवित रहते हैं और **महसूस** करते हैं।" यहाँ पहली बार हम एक मानसिक विशेषता का सामना करते हैं, और पशु, मानव और सामाजिक कार्यों की पूरी श्रृंखला में, हमें इससे निपटना होगा, जो एकमात्र सच्ची मानसिक शक्ति है। स्थिर और गतिशील के बीच हमारा अंतर यहीं से शुरू होता है, और यह इस आदिम आधार को कभी नहीं छोड़ता। भावना संवेदनशील दुनिया की शक्ति है; यह सामाजिक दुनिया की भी उतनी ही शक्ति है। यह सभी गतिविधियों का स्रोत है और जिसके बिना कोई उचित कार्रवाई नहीं हो सकती; क्योंकि निर्जीव निकायों में गति या गति को केवल रूपकात्मक अर्थ में क्रिया कहा जाता है, जैसा कि भावनाशील प्राणियों से उधार लिया गया है। इसलिए भावना से जुड़ी हर चीज मुख्य रूप से गतिशील है। संतुलन सिद्धांत संगठन में रहता है। असंगठित बल अप्रभावी है। संगठन का उद्देश्य ऐसे रूपों का निर्माण करना है जो बलों को केंद्रित और बाधित करते हैं और अंततः प्रभावों को तीव्र करने में अर्थव्यवस्था के साथ उनका व्यय करते हैं। ये रूप पृथ्वी पर रहने वाले विभिन्न जीव हैं। मनुष्य इनमें से सबसे अधिक संगठित है, और अपनी बुद्धि के बल पर मनुष्य सभी विकसित जातियों में सबसे अधिक संख्या में है। (वार्ड , 1895)*

इस प्रकार समसामयिक जनपुंज समाजों के लोकतंत्र में किसी अन्य तत्व की आपेक्षा प्रतियोगिता अधिक अनिवार्य तत्व है। एवं प्रतियोगी समाज में व्यक्ति का स्थान उसकी प्रतियोगिता क्षमता द्वारा निश्चित होता है। इस प्रतियोगिता में आपेक्षाकृत उपेक्षित और कम क्षमतावान लोगों के सम्मुख एक प्रकार का पहचान का संकट या INDENTING CRISIS उत्पन्न होता है जो अनेक प्रकार की विपथगामी प्रवृत्तियों का आधार बनती है। भारतीय संदर्भ में लोकतंत्र का यह विश्लेषण और भी समीचीन प्रतीत होता है। क्योंकि एक विशाल भू-भाग में निवासित विशाल जनसंख्या, जिसका लगभग एक चौथाई भाग निरक्षर है, और एक तिहाई जनसंख्या को दो वक्त भोजन भी नहीं मिलता। जहाँ राजनीतिक जागरुकता का अभाव है, जहाँ राजनीतिक आधुनिकीकरण की गति अत्यंत न्यून है। ऐसे में लोकतंत्र निश्चित रूप से एक अभिजनवादी रुप ले लेता है। क्योंकि देश का शासन लगभग चालीस वर्षों तक एक प्राइवेट लि. कंपनी की तरह चलाया जाता है जिसके CEO या M.D. गांधी नेहरु परिवार के सदस्य रहें है। करिश्माई नेतृत्व भारतीय लोकतंत्र की अपरिहार्यता बन गयी है। और इसका विस्तार दूसरे दलों तक भी हो गया है। अतः लोकतंत्र के अभिजनवादी स्वरुप के कारण राजनीतिक भर्ती की गति अत्यंत धीमी हो जाती है। फलतः बहुलवादी हित समूहों के मध्य सत्ता

संघर्ष विशुद्ध अभिजनवादी स्वरूप ले लेता है जिसमें अभिजन प्रत्यावर्तन की गति भी धीमी रहती है। अल्पसंख्यक अनुसूचित जाति एवं जनजाति की राजनीति इसका उदाहरण है। अभिप्राय यह है कि सत्तात्मक संघर्ष के खुले मंच के रुप में भारतीय लोकतंत्र कुछ चिरपरिचित चेहरों का अखाड़ा बन जाता है। अतः प्रतियोगिता के अवसरों की कमी असंतोषो को जन्म देती है।

यदि भारतीय लोकतंत्र के अध्ययन में व्यवस्थावादी विश्लेषण लागू करें तो स्पष्ट होता कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का पर्यावरण अर्थात सामाजिक व्यवस्था जिसमें राजनीतिक व्यवस्था एक उपव्यवस्था के रुप में कार्य करती है, पूर्णतः परम्परागत है और धर्म जाति भाषा संप्रदाय आदि इसके मूल आधार है। जबकि राजनीतिक व्यवस्था न्याय स्वतंत्रता और समानता जैसे आधुनिक मूल्यों पर आधारित है। अतः राजनीतिक व्यवस्था और उसके पर्यावरण की अंतः क्रिया स्वस्थ रुप से नहीं चलती और अनेक प्रकार के विकारों को जन्म देती है। जैस धर्म का कारक राजनीति व्यवस्था के सामने यह संकट प्रस्तुत करता है कि कुछ संविधानेत्तर सताएँ हैं जो कानून से ऊपर है। जाति का कारक यह निश्चित करता है कि समानता केवल संविधान में है। इस अस्वस्थ अंतः क्रिया के कुछ आवश्यक परिणाम होते हैं।

1. राजनीतिक व्यवस्था को जो फिड बैंक अपने पर्यावरण से मिलता है वह पूर्णतः गैरराज. और परम्परागत होता है। फलतः राजनीतिक समाजिकरण और संस्कृतिकरण की एक दूषित प्रक्रिया जन्म लेती है जिससे राजनीति का जातिकरण माफियाकरण और हिंसात्मक आंदोलन जन्म लेते हैं। बिहार और आंध्रप्रदेश के हिंसात्मक आंदोलन को हम इस दृष्टि से देख सकते हैं।

2. राजनीतिक व्यवस्था की प्रतिक्रिया भी बड़ी हद तक गैर राजनीतिक होती है। जैसे सामाजक विकास का प्रयास
संवैधानिक संशोधनों द्वारा किया जाता है। समाजिक न्याय संबंधी विभिन्न प्रयास और आरक्षण आदि। संविधान निर्माताओं ने हालांकि समाजिक न्याय की जिम्मेदारी राजनीतिक व्यवस्था पर डाली थी। लेकिन साथ ही यह भी आशा जतायी थी कि कालांतर में समाजिक विकास स्वतः स्फूर्त होगा तथा राजनीतिक व्यवस्था केवल एक उत्प्रेरक का कार्य करेगी। लेकिन पांच दशकों के अनुभव से यह स्पष्ट है कि समाजिक व्यवस्था न केवल जड़ है बल्कि किसी हद तक अभी भी प्रतिक्रियावादी है। फलतः असंतोष और उसकी हिंसात्मक अभिव्यक्ति एक स्वभाविक प्रतिक्रिया बन जाती है।

हिंसा

जहां तक भारतीय लोकतंत्र और हिंसा का संबंध है तो हिंसा की मूल उपज हमारी व्यवस्था में ही है। और इसे समसामयिक तत्वों ने ग्लोबल रुप दे दिया है। इसलिये आतंकवाद देशों की सीमाएँ लांघ चूका है। इसका अध्ययन इसी अंतर्राष्ट्रिय संदर्भ में करना उचित होगा। आतंकवाद के स्वरुप के संबंध में ALEX SCHMID - POLITICAL TERRORISM A RESEARCH GUIDE में लिखते है कि आतंकवाद हिंसा या हिंसा की धमकी का उपयोग है तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिये संघर्ष की एक विधि है। भय दोहन जिसका लक्ष्य है। यह क्रूर है और मानवीय प्रतिमानो का पालन नहीं करता। *"न तो "आतंक" शब्द और न ही राजनीतिक संदर्भों में इसका प्रयोग विशेष रूप से नया है। आधुनिक राजनीतिक संदर्भ में आतंक का सबसे पहला संदर्भ फ्रांसीसी क्रांति के जैकोबिन्स के आत्म-वर्णन से आता है, जिन्होंने अपने विरोधियों को पुराने शासन से बाहर निकालने के लिए "ला टेरेउर" का इस्तेमाल किया था। जैकोबिन्स ने स्वेच्छा से इस उपाधि को अपनाया और राजशाही के बाद के फ्रांस में अपने प्रभुत्व की अवधि में इसे लागू किया। 1794 की शुरुआत में राष्ट्रीय सम्मेलन में एकत्रित प्रतिनिधियों से बात करते हुए,(बिशरा ,2017)*
आतंकवाद, विद्रोह, क्रांति, गृहयुद्ध, गुरिल्लायुद्ध, अभित्रास और उग्रवाद जैसे शब्द प्रायः एक दूसरे के साथ प्रयुक्त किये जाते हैं। इन सबमें हिंसा सर्वमान्य है। ENCYCLOPEDIA OF SOCIAL SCIENCES के अनुसार आतंकवाद एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा एक संगठित समूह अथवा दल अपने प्रकट उद्देश्यों को प्राप्ति मुख्य रुप से हिंसा को योजनाबद्ध उपयोग से करता है। वस्तुतः आतंकवादी कार्यवाहियों का लक्ष्य वे व्यक्ति होते हैं जो आतंकवादी समूहों के उद्देश्यामें बाधक होते हैं। यद्यपि क्रांति,

विद्रोह या आतंकवाद के दीर्घकालिक उद्देश्य एक जैसे होते हैं। किन्तु इनकी तात्कालिक रणनीतियों में अंतर हो सकता है। आतंकवादी आंदोलनों की निम्नलिखित उद्देश्य प्रायः होते हैं -

1. हिंसक गतिविधियों द्वारा शासन को प्रतिक्रिया और अतिप्रतिक्रिया के लिये विवश करना जिससे जनता में शासन के प्रति घृणा और आतंकवादियों के प्रति सहनभूति प्राप्त हो।

2. जन समर्थन को संगठित करना और संभावित समर्थकों को आतंकवाद के लिये प्रोत्साहित करना।

3. अपने छिपने के लिये आधार क्षेत्रों की स्थापना करना।

हिंसा के कारण -

दार्शनिक आयाम - पुर्नजागरण काल में मेकियावली और आधुनिक युग में डार्वीन वाद ने शक्ति को जीवन का आधार माना। हीगल ओपनहीमर नित्शे सोरेल हिटलर मोसोलेनी इत्यादि ने हिंसा को राज्य का मौलिक चरित्र घोषित किया। मार्क्सवादी विचारको ने हिंसा को सामाजिक परिवर्तन का यंत्र माना। किन्तु आधुनिक आतंकवाद का मसीहा माओ-त्से-तुंग है। माओ ने गुरिल्लायुद्ध के रुप में आतंकवाद को एक सुविचारित रणनीति प्रदान की। भारत में समस्त नक्सली आंदोलनों की रणनीति माओ के इसी गुरिल्लायुद्ध और पिपुल्स वार के दर्शन पर आधारित है।

2. मनोवैज्ञानिक आयाम बीसवीं शताब्दि के अनेक लेखकों ने अत्यधिक तकनीकि प्रगति के कारण अकेले हो गये मानवीय स्वभाव को हिंसा का प्रमुख कारण माना है। अमेरिकी लेखक E. RUBENSTEIN ने अपनी पुस्तक अल्केमिस्ट ऑफ रिवोलूशन में कहा है कि आतंकवादी भी हमारी तरह एक भावुक जीव होता है। किन्तु जब वह यह अनुभव करने लगता है कि उसे धोखा दिया गया है। तो उसके सामने हिंसक होने का विकल्प उपस्थित होता है। नव प्रायडवादी एरिकफ्राम ने भी अलगाव वाद को आतंकवाद का कारण माना है। राबर्ट निस्बत ने कम्यूनिटी एंड पावर में आतंकवाद का कारण सा◌ामजिक अलगाववाद को आतंकवाद का कारण माना है। इनके अनुसार मनुष्य में सुरक्षा की भावना का अभाव है और असुरक्षा की भावना उसे हिंसा के लिये प्रेरित करती है। हरवर्ट मार्कुजे के अनुसार अलगाव का कारण है स्वतंत्रता का छिन जाना। अतः इस पराजय और कुंठा से उभरने का एक मात्र उपाय हिंसा है। इसी प्रकार का विश्लेषण सात्रे एवं एलबर्टकाम् इत्यादि ने भी प्रस्तुत किया है।

1. **सीमा पर समर्थित आतंकवाद** - वास्तव में शीतयुद्ध के दिनों में विदेश नीति के रुप में इसका प्रयोग महाशक्तियों ने किया। संपूर्ण हिंद चीन और अफ्रीका का गृहयुद्ध इसी का परिणाम था। वर्तमान में पाकिस्तान और चीन जैसे हमारे पड़ोसियों ने कश्मीर उत्तर पूर्व और मध्य भारत के नक्सली आतंकवादियों को सहायता प्रदान कर आतंकवाद को प्रोत्साहित किया है। इस प्रकार के आतंकवाद में असंतुष्ट धार्मिक और जातिय गुटों को शत्रु देशों द्वारा सहायता और समर्थन प्रदान किया जाता है। इसमें परम्परागत युद्ध के बजाय अपेक्षतया कम खर्च वाले छद्म युद्ध या प्राक्सीवार द्वारा शत्रु देश के क्षेत्र में एक स्थायी समस्या और अशांति उत्पन्न की जाती है।

पांच दशकों के योजनार्गत विकास में क्षेत्रीय असंतुलन स्पष्ट रुप से झलकता है। जहां पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, और तमिलनाडू का तीव्र आद्यौगिकरण हुआ है वही कश्मीर और पूर्वोत्तर राज्यों में इसका अभाव है। अतः इन राज्यों में

आतंकवाद के पीछे आर्थिक असंतुलन एक बड़ा कारण है। इन राज्यों की गरीबी और बेरोजगारी ने युवकों को आतंकवाद की ओर ढकेला है।

1. बिहार और आंध्रप्रदेश के नक्सलवादी आतंकवाद के जन्म का प्रधान कारण भूमि सुधारों की ठीक से न लागू करना है। इन राज्यों में जमींदार वर्ग ने भूमि सुधार कानूनों की कमी का लाभ उठा कर सरकारी अधिकारियों की मिली भगत से भूमि को अपने ही परिवारों में संरिक्षत रखा फलतः इन राज्यों में Have And Have Nots वाले दो वर्गों का उदय हुआ। जिसमें भूमिहिनों ने आतंकवाद का रास्ता अपनाया।

2- **लाल आतंवाद**

सीधे-सीधे कहा जाए तो साम्यवादी आतंकवाद या माओवादी आतंकवाद। यह तीसरी दुनिया के देशों में राज्य की विरुद्ध एक संगठित हिंसक संघर्ष खड़ा कर राज्य को परेशान करने का एक विदेशी उपकरण है। भारत में आंध्र प्रदेश से लेकर नेपाल तक का रेड कॉरिडोर का माओवादी सपना वास्तव में चीन समर्थित है , और देश के तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग व सिविल सोसाइटी का एक हिस्सा उनके लिए वैचारिक आधार खड़ा करता है। वास्तव में लाल आतंक विकासशील देशों में एक गंभीर समस्या है लेकिन हाल के वर्षों में भारत सरकार द्वारा किए गए प्रयासों से इसमें प्रशंसनीय सफलता प्राप्त हुई है। आंध्र प्रदेश में तो यह समाप्त हो गया है छत्तीसगढ़ में भी लगभग समाप्ति की ओर है। बिहार और झारखंड में भी लगभग समाप्त हो चुका है। किंतु लाल आतंक के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है क्योंकि यह कभी भी सर उठा सकता है।

3. **जातिय (इथनिक) संघर्ष**

नागा कूकि संघर्ष बोडोलैंड तथा असम का आंदोलन वस्तुतः जातिय संघर्ष का ही परिणाम है। उत्तर पूर्व भारत के छोटे-छोटे प्रजातियां समूहो को विदेशी ताकते विभिन्न स्रोतों से भड़काने और पथ भ्रष्ट करने का कार्य करती हैं जिसके पढ़े लिखे युवा उनके प्रभाव में आकर राज्य के विरूद्ध हिंसा करते हैं। इथनिक कनफ्लिक्ट का पूरे विश्व में लंबा इतिहास रहा है जो यह बताता है की जातीय संघर्षों में बाहरी शक्तियों के महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

4. **राजनीतिक चेतना का विस्तार**

विशेषकर पूर्वोत्तर राज्यों में राजनीतिक चेतना का विस्तार विपथगामी तरीके से हुआ है। जिसके कारण राजनीतिक मांगों ने उपराष्ट्रवाद का रुप ले लिया है। राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया मे पूर्वोत्तर राज्यों में इसीकारण समस्याएं आतीं है।

5. **शासक वर्ग की संवेदन हीनता**

रजनी कोठारी का यह कथन सत्य प्रतीत होता है राजसत्ता का अभिजन वर्ग ने अपहरण कर लिया है। मायरन बीनर के शब्दों में भारत में सकार दबाव गुटों के मांगों पर तब तक ध्यान नहीं देती जब तक वे अपनी शक्ति का परिचय न करा दें। कई राज्यों में क्षेत्रीय दलो की सरकारों ने अपनी राजनीतिक सत्ता को बचाने के लिए हथियारबंदी गिरोहो से साठगांठ की, ऐसी सूचनाओं समाचार पत्रों में छपती रहीं है।

6. **चुनावी राजनीति** - चुनाव जीतने और सरकार बनाने के लालसा के आगे राष्ट्रीय हितों की बलि सामान्यता राजनेताओं द्वारा दे दी जाती है। तथा चुनावी फायदें के लिये पार्टियां आतंकवादी समूहों का समर्थन करने और लेने से नहीं हिचकती। पूर्वोत्तर की राजनीति इसका उदाहरण है।

7. **शस्त्र और नार्को आतंकवाद**

मादक पदार्थों कि अन्तर्राष्ट्रिय स्तर पर तस्करी और शस्त्र व्यापार आतंकवाद के प्रसार का एक बड़ा कारण है। मादक पदार्थों की तस्करी से ही इन्हें वह धन मिलता है जो हथियार खरीदनें के काम आता है। पूर्वोत्तर राज्यों का आतंकवाद NARCO TERRORISM का अच्छा उदाहरण है। हथियार कंपनियों और मादक पदार्थों को व्यापारियों के मध्य एक अनयोन्याश्रय संबंध स्थापित है। और इस गठजोड़ ने विश्व के सभी छोटे- बड़े आतंकवादी गुटों को परस्पर जोड़ दिया है। सर्वाधिक अफीम उत्पादन अफगानिस्तान में होता है। जबकि हेरोईन की सर्वाधिक खपत दक्षिण पूर्व एशियाई देशों और लैटिन अमेरिकी देशों में है। फलतः नागालैंड और मिजोरम के माध्यम से बर्मा के रास्ते से मादक पदार्थ द. पू. एशिया पहुंचाये जाते हैं, गोल्डेन ट्रायंगल कहा जाता है। नागालैंड का नागा कूकि संघर्ष वस्तुतः मादक पदार्थों के सिल्करुट पर आधिपत्य का ही संघर्ष था।

8. कानून व्यवस्था की कमी तथा नौकरशाहों की यथास्थिति वादिता।

9. विचारधारा का संकट तथा अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति संतुलन का बिगड़ना।

निष्कर्ष

1. अमेरिकी माडल की कैरेट एंड स्टिक पद्धती का पालन तथा आंतकवादियों के विरुद्ध एक सकारात्मक प्रतिक्रिया की आवश्यकता है।

2. इसके लिये विशेष आतंकवादी निवारण दस्तों का चयन किया जाये।

3. आर्थिक असंतुलन को दूर करने के लिये प्रभावी उपाय किये जॉए तथा आर्थिक पैकेजों की घोषणा की बजाय विकास का ईमानदार प्रयास किया जाये।

4. नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में पं. बंगाल की भांति भूमि सुधारों की ईमानदारी से लागू किया जाये।

5. राजनीति के अभिजनवादी स्वरुप को कम करके राजनीतिक सहभागिता बढ़ाई जाये।

6. आवश्यक कानूनों का निर्माण कर उन्हें सही तरीके से लागू किया जाये।

8. कानून व्यवस्था को अधिक पारदर्शी बनाया जाये।

9. राष्ट्रहित और दलीय हित में अंतर की सर्वाधिक आवश्यकता है अन्यथा भारत एक Soft State बना रहेगा।

संदर्भ

एडेसनिक, डेविड और मैकफॉल, माइकल। "लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिए निरंकुश सहयोगियों को शामिल करना," द वाशिंगटन क्वार्टरली, खंड 29, संख्या 2 (वसंत 2006): 7-26।

एलिसन, ग्राहम टी., जूनियर, और रॉबर्ट पी. बेशेल, जूनियर। "क्या संयुक्त राज्य अमेरिका लोकतंत्र को बढ़ावा दे सकता है?" राजनीति विज्ञान क्वार्टरली, खंड 107, संख्या 1 (वसंत 1992): 81-98। https://www.jstor.org/stable/2152135

स्मिथ, टोनी. अमेरिका का मिशन: बीसवीं सदी में लोकतंत्र के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका और विश्वव्यापी संघर्ष। प्रिंसटन: प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994.

वार्ड एल एफ (1895). *सेटैटिक एण्ड डायनामिक सोशियोलाजी*. पोलिटीकल साइंस क्वाटर्ली 10(2), 203–220. https://doi.org/10.2307/2139729

ब्योर्गो टी एण्ड रवेण्डल जे (2019). एक्सट्रीम राइट वायलेंस एण्ड टेरोरिज्म ; कान्सेप्ट पैटर्न एणूड रिसपान्स । इण्टरनेशॅल सेन्टर फार काउण्टर टेरोरिज्म म http://www.jstor.org/stable/resrep19624